विज्ञान में हम कब तक पीछे-पीछे चलेंगे?

डॉ. डी. बालसुब्रमण्यन

इस वर्ष की भारतीय विज्ञान कॉन्ग्रेस के उद्घाटन के अवसर पर 3 जनवरी के दिन प्रधान मंत्री मनमोहन सिंह ने इस बात पर खेद जताया कि कैसे विज्ञान, टेक्नॉलॉजी, इंजीनियरिंग, कृषि व चिकित्सा (STEAM) के संदर्भ में चीन हमसे आगे निकल गया है। उन्होंने यह भी जोड़ा कि भारत में विज्ञान व टेक्नॉलॉजी के क्षेत्र में निवेश को 2011 के 3 अरब डॉलर से बढ़ाकर 2017 तक 8 अरब डॉलर कर दिया जाएगा।

मन में विचार यह आता है कि यह वृद्धि 2017 में क्यों, 2013 में क्यों नहीं? दूसरा विचार यह आता है कि क्या पैसा ही एकमात्र समाधान है? प्रधान मंत्री के व्याख्यान के दस दिन बाद उनके विज्ञान सलाहकार प्रोफेसर सी.एन.आर. राव ने *साइन्स* पत्रिका के 13 जनवरी, 2012 के अंक में लिखा कि क्यों एक संस्था प्रमुख का कार्यकाल बढ़ाने का निर्णय करने में भारत सरकार को पूरा एक साल लगता है और जोड़ा कि "लोगों के साथ व्यक्तियों के तौर पर बेहतर व्यवहार होना चाहिए और आप उनसे परिणामों की मांग तभी कर सकते हैं जब आपने उनके साथ अच्छा सलूक किया हो।...हम जिस संकट का सामना कर रहे हैं वह यह है कि विभिन्न क्षेत्रों में अत्यंत सक्षम वैज्ञानिकों का एक उल्लेखनीय/निर्णायक साइज़ का समूह कैसे तैयार करें।"

कैसे करें यह काम? हमारे देश में स्टीम का निष्पादन सिर्फ सार्वजनिक संस्थाओं द्वारा नहीं बल्कि निजी उद्योगों द्वारा भी किया जाता है। अलबत्ता, निजी उद्योगों में अनुसंधान कार्य मूलतः बंद दरवाज़ों में किया जाता है और अपने ही मकसद से किया जाता है। जैसा कि इन्फोसिस के नारायण मूर्ति बताते हैं, उद्योगों के बीच और अकादमिक जगत के साथ परस्पर सहयोग को बढ़ाने व ज़्यादा सक्रिय बनाने की ज़रूरत है।

सच्चाई यह है कि भारत में किसी भी साइज़ का एक भी उद्योग-आधारित अनुसंधान प्रतिष्ठान नहीं है जो वैज्ञानिकों को अनुदान देने के मामले में सरकार के प्रयासों का पूरक बन सके। यह यू.एस. की परिस्थिति के एकदम विपरीत है जहां रॉकफेलर, हॉवर्ड ह्यूजेस, और केक फॉउन्डेशन जैसे कई प्रतिष्ठान हैं। इसी प्रकार से जहां निजी औद्योगिक घराने उच्च स्तर के मेनेजमेंट व बिज़नेस स्कूल खोलने व चलाने में काफी पैसा लगाते हैं, जिनमें अपनी फेकल्टी तो होती ही है, दुनिया भर से अतिथि फेकल्टी भी आमंत्रित की जाती है, वहीं विज्ञान, टेक्नॉलॉजी, कृषि, चिकित्सा वगैरह के क्षेत्र में एक भी ऐसी संस्था नहीं है।

निजी उद्योग आई.आई.टी., आई.आई.एससी. या कुछ विश्वविद्यालयों को जो पैसा उपलब्ध करते हैं, वह उनके बजट का 20 प्रतिशत भी नहीं होता। और तो और, निजी उद्योग अनुसंधान व विकास के क्षेत्र में सरकारी संस्थाओं में जो साझेदारी करते हैं, वह भी नगण्य ही है। हम परिस्थिति में सुधार के जो भी प्रयास करें, उनमें निजी उद्योगों की भागीदारी में उल्लेखनीय वृद्धि अनिवार्य है। यह भागीदारी संयुक्त उद्यमों के रूप में भी होनी चाहिए और प्रासंगिक भी।

उपरोक्त परिस्थिति में भारत अकेला नहीं है। यही हालत तकरीबन 80-90 विकासशील देशों में पाई जाती है। इनमें से कई देश तो भारत, ब्राज़ील, दक्षिण अफ्रीका और मेक्सिको को अपेक्षाकृत 'विकसित' देश मानते हैं।

इस हालत को बेहतर कैसे बनाया जाए? यह काम सिर्फ उत्तर-दक्षिण या दक्षिण-दक्षिण सहयोग बढ़ाकर नहीं होगा, बल्कि इसके लिए अपने देश के अंदर भी प्रयास करने होंगे। और इस संदर्भ में हमें सी.एन.आर. राव और नारायण मूर्ति जैसे वरिष्ठ सलाहकारों की बातें सुनने के अलावा यह भी देखना होगा कि देश की अगली पीढ़ी क्या कह रही है। *साइन्स* पत्रिका के 6 जनवरी 2012 के अंक में 'नेक्स्टजेन वॉइसेज़' (यानी अगली पीढ़ी की आवाज़ें) के नाम से आलेख प्रकाशित हुआ है। इनमें से कुछ आवाज़ें खास तौर से सूझबूझ से भरी और प्रासंगिक हैं।

मसलन, दक्षिण अफ्रीका के केपटाउन विश्वविद्यालय के शेड्रेक चिरिकुर का मत है: "हालांकि विकासशील देश

विज्ञान में बराबरी करने का खेल खेलते रहे हैं, मगर खाई बढ़ती ही जा रही है। क्या वे कभी बराबरी कर पाएंगे? विकसित देशों ने स्वयं को ज्ञान-आधारित समाजों के रूप में स्थापित कर लिया है, जहां वैज्ञानिक नए ज्ञान के सृजन पर ध्यान केंद्रित कर सकते हैं। ज्ञान के सृजन में निवेश की कमी के चलते विकासशील देश पश्चिम से ज्ञान के आयात को लेकर संतुष्ट नज़र आते हैं।...साथ ही (स्थिति यह है कि) विकसित देशों में स्टीम के क्षेत्र में 'अंदरुनी' दाखिलों का अभाव है (क्योंकि विज्ञान को मुश्किल माना जाता है)। ये देश विकासशील देशों से (प्रतिभा का) आयात करते हैं और वहां प्रतिभा-पलायन में वृद्धि करते हैं। इसकी वजह से खाई और चौड़ी हो जाती है।...तो हमें क्या करना चाहिए? हमें अपनी ज़रूरत से कहीं ज़्यादा प्रतिभाएं विकसित करनी चाहिए ताकि हम अपनी घरेलू मांग की पूर्ति भी कर सकें और बाहरी मांग की भी।...हांगकांग ने उच्च स्तरीय विश्वविद्यालय विकसित करने का जो मॉडल अपनाया है, वह सत्ता का संतुलन बदलने और नए ज्ञान का सृजन करने की दृष्टि से बढ़िया है। इस प्रकार से विज्ञान का भविष्य तो दक्षिण में है। क्या यह सफल होगा? समय ही बताएगा।"

बुद्धिमानी से भरे इन शब्दों पर विचार करने की ज़रूरत है। क्या भारतीय निजी उद्योग विज्ञान के क्षेत्र में यह काम करने को आगे आएगा, जैसा उसने मेनेजमेंट और बिज़नेस के क्षेत्र में किया है?

एक अन्य युवा, सिएटल स्थित वॉशिंग्टन विश्वविद्यालय की लेकेलिया जेंकिन्स ने यह लिखा है:

"एक बैठक में मेरी एक व्यक्ति से काफी विचारपूर्ण चर्चा हुई थी, जो बाद में मुझे एक सम्मेलन में बुलाना चाहते थे। उन्हें सिर्फ इतना याद था कि मैं एक अश्वेत स्नातक युवती हूं जो ड्यूक में पानी से सम्बंधित मुद्दों का अध्ययन कर रही है। इन विशेषणों वाले बहुत ही कम व्यक्ति थे और अंततः ईमेल घूमती-फिरती मुझ तक पहुंच गई - सुराग थे नस्ल और लिंग।"

मैंने यह उद्धरण खास तौर से दिया है क्योंकि इस वर्ष की इण्डियन साइन्स कॉन्ग्रेस की थीम थी विज्ञान में महिलाएं। इस अवसर पर भारत की कई सफल महिला वैज्ञानिकों से सम्बंधित एक पुस्तक का विमोचन भी किया गया था। और एक तथ्य यह भी है कि भारत (तथा अन्य विकासशील देशों) में महिलाओं को रिसर्च एसोसिएट्स, सहायक तथा तकनीशियन जैसे 'सॉफ्ट' काम दिए जाते हैं। (आज भी देश में सार्वजनिक वित्त से चलने वाली संस्थाओं में यह गैर-अधिकारिक नीति है कि एक ही विभाग में दम्पति को नौकरी नहीं दी जाती।) भारत जब अपने विज्ञान को मज़बूत करने की कोशिश करे, तो महिलाओं को प्रोत्साहन देना भी ज़रूरी होगा। हमें इस 'सॉफ्ट भेदभाव' को न सिर्फ रोकना होगा, बल्कि पलटना होगा। इसके लिए महिलाओं को शामिल करना होगा, प्रोत्साहित करना होगा। वे मात्र तकनीशियन जैसे नौकरियों से कहीं ज़्यादा की हकदार हैं।

एक और नेक्स्टजेन है नेदरलैण्ड के मेनो हॉफमैन। वे लिखते हैं: "आजकल जो लोग विज्ञान में काम कर रहे हैं, वे या तो पीएच.डी. कर रहे हैं या पूरी कर चुके हैं। अलबत्ता, मुझे आशंका है कि विज्ञान में ज़्यादा से ज़्यादा तकनीशियन काम करेंगे और विज्ञान को बढ़ावा नहीं देंगे। तकनीशियन तकनीकों को बेहतर बनाने और उन्हें प्रकाशित करने पर ध्यान एकाग्र करते हैं। नेचर प्रोटोकॉल्स/मेथड्स जैसी पत्रिकाओं में प्रकाशनों में नाटकीय वृद्धि होगी।" ***(स्रोत फीचर्स)***

स्रोत के ग्राहक बनें, बनाएं

वार्षिक सदस्यता

व्यक्तिगत 150 रुपए संस्थागत 300 रुपए

सदस्यता शुल्क एकलव्य, भोपाल के नाम ड्राफ्ट या मनीऑर्डर से

ई-10,शंकर नगर, बी.डी.ए. कॉलोनी, शिवाजी नगर, भोपाल (म.प्र.) 462 016

के पते पर भेजें।